कशमकश

हिन्दी ADDA

अमिय बिंदु

# कशमकश

सेक्रेटरी को केबिन से बाहर निकाल 'रघु' ने धड़ाक से दरवाजा बंद कर दिया। इतनी जोर से कि दरवाजे का शीशा चकनाचूर होकर बिखर गया। लोगों की नजरें उधर उठ गई। फर्श पर शीशे के टुकड़े बिखरे थे। सारिका के मन में भी कुछ चिटक गया, कुछ टूट गया। उसकी आवाज नहीं सुनाई पड़ी। टुकड़ों को सहेजती हुई, रुलाई को गटकती हुई वह अपनी केबिन में चली गई।

रघु सर गुस्से में है। बहुत ही गुस्से में है।

बात पूरी ऑफिस के वातावरण में तैरने लगी। कनॉट प्लेस से थोड़ी दूर बाराखंबा रोड पर आसमान को उँगली करती हुई एक इमारत खड़ी है। इसके ग्यारहवें तल पर देश की सबसे बड़ी तेल कंपनी का ऑफिस है यह। जिनके माँ-बाप गंगा में जौ बोए होते हैं उन्हीं के बेटे-बेटियों को नौकरी मिलती है इसमें। बड़े भाग मानुष तन पावा। उससे भी बड़ा भाग कि इस कंपनी में आवा। अपनी मोटी आमदनी के चलते कंपनी अपने कर्मचारियों पर भी मोटा खर्च करती है।

रघु है कौन?

रघु इसी कंपनी में सीनियर सेल्स मैनेजर है। रघु, रंजना का पति भी है। रंजना, रघु से ज्यादा पढ़ी लिखी है। ज्यादा डिग्रियाँ हैं उसके पास। मगर नकचढ़ी नहीं है। रंजना से शादी करके रघु खूब खुश था। शादी के समय रंजना नौकरी नहीं करती थी। पढ़ाई के बल पर मोटे तनख्वाह वाले रघु को फाँस लिया था। या कहिए कि इलाहाबाद यूनिवर्सिटी की स्कॉलर से रघु ने शादी के लिए हाँ कर दी थी। रंजना इलाहाबाद में कंपटीशन की तैयारी भी करती थी। रघु के मन में सरकारी नौकरी न होने की टीस थी। कई बरस तैयारी में उसने भी खराब किए थे। उसे लगा दोनों में से कोई एक सरकारी नौकरी में रहेगा तब भी जिंदगी की गाड़ी चल पड़ेगी।

तो क्या रघु, रंजना से गुस्सा है?

रघु बड़ी पोस्ट पर है। खूब कमाता है। ब्याह के बाद रंजना इलाहाबाद से दिल्ली आ गई। दिल्ली बड़ा शहर था। देखने के लिए बहुत कुछ था। घूमने के लिए बहुत कुछ था। अभाव जैसा कुछ था भी नहीं। राजधानी की चकाचौंध ने उसे सम्मोहित सा कर लिया। शादी के बाद एक बरस कैसे निकल गया दोनों को पता न चला। साल बीतते किसी तीसरे के आने की आहट मिल गई। तब जाकर दोनों को एहसास हुआ कि एक साल हनीमून में ही बीत गया। कुछ दिनों बाद एक पुरुष सदस्य ने घर में जन्म लिया। यह हैप्पी फेमिली का तीसरा सदस्य था। अमन के आने से घर की रौनक बढ़ गई। रघु की जिम्मेदारियाँ बढ़ गईं। रंजना की व्यस्तता बढ़ गई।

रघु जब तब रंजना को छेड़ता रहता। 'इतने अरमानों से पढ़ाई की थी। कुछ कर लो। समय निकल जाएगा तो हाथ मलती रहोगी।' रंजना कसमसाती। इधर-उधर थोड़ा पढ़ने लगती। उसे पढ़ता देख रघु उसे समझाने लगता। कुछ-कुछ बताने लगता। तरह-तरह की सलाह देता।

घर सामानों से पटा पड़ा था। सारी सुविधाएँ थीं। ऑटोमेटिक मशीनों से जिंदगी में आराम बहुत आ चुका था। फिर भी रंजना पहले की तरह नहीं पढ़ पाती थी। पहले की तरह मन नहीं रमता था। किताब खोलकर बैठी रहती और रघु देश की समस्याओं पर चर्चा शुरू कर देता। वह बढ़ती जनसंख्या को लेकर खूब परेशान था। बीटेक में उसे जनसंख्या की समस्या पर लिखे निबंध पर राष्ट्रीय पुरस्कार मिल चुका था। वह गुस्से से काँपने लगता कि सरकारें उस दिशा में कुछ नहीं कर रहीं। उसने बहुत अच्छे सुझाव भी अपने निबंध में दिए थे।

ऐसी ही किसी चर्चा के दौरान दोनों ने सहमति से 'हम दो हमारे एक' का चीनी फैसला ले लिया। फिर उस पर अडिग रहने की कोशिश करने लगे। रघु को कभी कभी खुशी होती कि वह देश की इतनी भीषण समस्या के समाधान हेतु कुछ कर रहा है। रंजना बलिहारी जाती कि इतना संवेदनशील पति मिला है। फिर भी रंजना को कुछ खाली खाली सा लगने लगा। अमन के चलते व्यस्तता तो बढ़ी थी लेकिन वह कुछ दिनों तक किताबों और पढ़ाई से दूर रहती तो मन उसे कचोटने लगता। वह कुछ पढ़ने या कुछ करने के लिए कुलबुलाने लगती। अगर किसी सहेली से कभी बात हो जाती तब तो वह छटपटाने लगती। उसकी कई सहेलियाँ नौकरी में लग चुकी थीं।

तो क्या रघु, रंजना के कुछ न कर पाने से गुस्सा था?

दो तीन साल की लुकाछिपी और बीच बीच की पढ़ाइयों के बाद रंजना की कोशिश रंग लाने लगी। मगर रंजना ने महसूस किया कि जब भी कोई फाइनल रिजल्ट आने वाला होता, रघु का व्यवहार बदल जाता। वह ताने मारने लगता, 'अब तो तुम दिल्ली से चली जाओगी।' 'दिन भर ए.सी. चलाई रहती हो, वहाँ कहाँ मिलेगा?' 'इतने दिन दिल्ली में रहने के बाद छोटे शहर में कैसे रहोगी?' 'अमन की पढ़ाई का क्या होगा?'

छोटी-छोटी बातों पर रूठ जाता। मुँह फुला लेता। बोलना बंद कर देता। गाँव में माल कहाँ मिलेगा? ए.सी. कहाँ मिलेगा? मेट्रो जैसा नजारा कहाँ होगा? बिजली भी नहीं रहेगी। वहाँ की सरकारी ऑफिसों में कूलर तक नहीं होता। कई-कई दिन बिजली ही गायब रहती है।

रंजना उसे समझाने की कोशिश करती, 'हम लोग खुद गाँव से आए हैं। तुम गाँव से पढ़कर इतनी बड़ी पोस्ट तक पहुँचे हो।'

रघु कुछ देर के लिए समझ जाता मगर जैसे ही किसी इंटरव्यू के लिए कॉल होती, वह बड़बड़ाने लगता। अजीब बात यह थी कि जब कहीं सेलेक्शन नहीं होता तो वह रंजना

को अच्छे से समझाता। खूब दिलासे देता और अच्छा करने के लिए उत्साहित करता। और ज्यादा पढ़ने के लिए कहता।

तो क्या रघु, रंजना का सेलेक्शन न होने से गुस्सा था?

उस साल जनवरी में पी.सी.एस. का रिजल्ट आया। अंतिम सूची में रंजना का भी नाम था। ट्रेजरी ऑफिसर के लिए सेलेक्शन हो गया था। रघु भी खुश हुआ। रंजना को समझाता रहा, 'सँभाल के रहना वहाँ। लोगों से ज्यादा घुलना मिलना मत। अमन को बचाकर रखना।'

रंजना उसे टोकती, 'अभी तो रिजल्ट आया है। पता नहीं कब जाना होगा? कहाँ जाना होगा?' कहती कि कहीं दूर बस्ती, बहराइच जैसी जगहों पर होगा तब थोड़ी जाएगी। रघु आश्वस्त होने की कोशिश करता कि रंजना बिना उसकी सहमति और अनुमति के नहीं जाएगी। फिर भी वह रह-रहकर परेशान हो जाता। इस बीच उसने रंजना को हर तरह से खुश करने की कोशिश की। उसे खूब घुमाया, दिल्ली की हर जगह दिखा डाली, मॉल्स में लेकर गया, मल्टीप्लेक्स में फिल्में दिखाई, बाहर खाना खिलाया। जितना हो सकता था वह उसे दिल्ली की दुनिया में रमा देना चाहता था। वह रंजना को सीधे मना नहीं करना चाहता था। लेकिन मन ही मन चाहता था कि रंजना खुद रुक जाए।

एक दिन ऑफिस से लौटकर रघु ने कहा, 'राजीव फूफा के यहाँ चलना है। जल्दी से तैयार हो जाओ।' यह बहुत अप्रत्याशित बात थी। तीन साल से ज्यादा हो गए थे उनके घर गए। खुद रघु को उनके घर जाना पसंद नहीं था। 'राजीव फूफा के यहाँ तो तुम जाने से मना करते हो। कहते हो वे लोग हमेशा सरकारी नौकरी की गुणगान करते रहते हैं। बड़े लोग हैं। अपने बस का नहीं।'

रघु ने कुछ नहीं सुना, 'अब अपनी बीबी भी तो सरकारी अफसर बन गई है।' रंजना ने बात में छिपे तंज को गहराई से महसूस किया। वह उदास हो गई। कोई नया बखेड़ा नहीं चाहती थी। चुपचाप तैयार होकर दोनों निकल लिए।

वहाँ पहुँचकर रघु ने पुराना प्रसंग छेड़ दिया, 'बुआ, आप काशी हिंदू विश्वविद्यालय में पढ़ाती थीं न?'

शादी के समय रघु की बुआ बी.एच.यू. में लेक्चरर थीं। फूफा की नौकरी के चलते, उन्हें अपनी नौकरी छोड़नी पड़ी थी। बुआ उस पर ज्यादा बात नहीं करना चाहती थीं मगर रघु घूम फिर कर वही बात करता रहा। रंजना ने बुआ के मन की टीस को महसूस

किया। पचपन के आसपास की थीं बुआ। घुटनों की बीमारी, मोटापे और शुगर से त्रस्त। रघु ने बुआ के 'त्याग' पर ज्यादा जोर दिया तो रंजना बिफर पड़ी, 'नौकरी करतीं तो इतनी चुप नहीं रहतीं। तुम क्या समझोगे उनका दर्द? क्या बनारस, गाजीपुर, बलिया, गोरखपुर के बच्चे आई.आई.एम. या एम.बी.बी.एस. नहीं कर पाते? खुद फूफाजी भी बी.एच.यू. से ही पढ़े हैं।'

तर्क से खाली होकर रघु ने ब्रह्मास्त्र फेंका जो हर पुरुष, स्त्री के लिए फेंकता है, 'तुमसे तो बहस करना ही बेकार है।'

तो क्या रघु, रंजना के नौकरी के फैसले से गुस्सा था?

रंजना के नौकरी ज्वाइन किए हुए चार महीने हो चुके थे। जुलाई का आखिरी हफ्ता था। मौसम में खूब उमस थी। रंजना से मिलने रघु जौनपुर गया हुआ था। उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल क्षेत्र का जिला था यह। बनारस से बिल्कुल सटा हुआ। बारिश के आसार नहीं दिख रहे थे। धरती तप रही थी। खेतों में दरारें आनी शुरू हो चुकी थीं। अमन के शरीर में जगह-जगह फोड़े फुंसियाँ निकली थीं। कहीं से मवाद निकल रहा था तो कहीं खून की लाली थी। पापा, पापा कहकर वह दौड़ा तो रघु ने उसे झिड़क दिया, 'क्या हाल बना रखा है? यही सब गंदगी नहीं मिल रही थी तुम्हें वहाँ?'

रंजना गुस्से से काँप उठी। एक महीने बाद रघु आया था। कितना इंतजार किया था उसने? ढेर सारी बातें करना चाह रही थी। ऑफिस की, लोगों की, पड़ोस की, दिल्ली वाले पड़ोसियों की। रघु ने उसकी ओर मुँह उठाकर देखा तक नहीं? अमन को दवा दिलाने चला गया। लौटकर फोड़े-फुंसियों की सेवा में लगा रहा। अमन इतने दिनों बाद पापा को पाकर खूब खुश था। रंजना चुपचाप सिसक रही थी। अंदर ही अंदर न जाने कितने फोड़ों की टीस उठ रही थी। लग रहा था पूरे बदन में फुंसियाँ ही फुंसियाँ हैं। रात में फुंसियों की जगह काँटे उग आए। करवट बदलते रात बीत गई। वह सोचती रही। गुनती रही। कुढ़ती रही। रघु ने पिछले चार महीनों में उसे बार-बार गुनहगार ठहराया था। अमन को खरोंच लग जाए, चोट लग जाए, बुखार हो जाए, दस्त लग जाए। हर बार उसे जिम्मेदार ठहराकर कुछ होने पर देख लेने की धमकी थमा देता। जैसे दिल्ली में अमन को कभी कुछ हुआ ही न हो। जैसे अमन के लिए अकेले वही जिम्मेदार है। रंजना को जलता हुआ छोड़कर लौट गया था रघु।

तो क्या अमन के बीमार होने से रघु गुस्सा हुआ?

धीरे-धीरे एक साल बीत गया। रघु का जौनपुर आना-जाना लगा रहता। कभी रघु संयत रहता तो कभी कुछ देखकर भड़क उठता। इस बार रंजना का चेहरा देखकर मुस्कुराया, 'अपना चेहरा देखा है आइने में काली माई? कैसी थी? क्या हो गई हो?' यह तिरछी मुस्कुराहट थी। किसी को उसकी औकात बताने के लिए मुस्कुराया जाता है, वैसी।

तिरछेपन को महसूस करते हुए भी रंजना ने हँसने की कोशिश की, 'शादी के समय वाली रंजना को भूल गए? तुम्हीं तो कालीमाई दियासलाई कहकर चिढ़ाते थे। अब गोरी चिट्टी रखकर मुझे क्या ड्राइंग रूम में सजाओगे?'

ऐसे हल्के-फुल्के क्षण बड़ी जल्दी बीत जाते। अमन की तबियत खराब थी। बुखार उतर ही नहीं रहा था। रघु को फिर मौका मिल गया। वह फिर से उसी खोल में घुस गया, 'अब तो सोच लो। न जाने कौन सा भूत सवार है तुम पर। जब तक कुछ बुरा नहीं होगा तब तक नहीं मानोगे तुम लोग।'

अब रंजना चुप न रह सकी। वह शेरनी की तरह झपट पड़ी, 'इस तरह क्यों कोसते हो? मेरी गलती क्या है? तुम्हीं तो नौकरी करने के लिए कहते थे? बहाने छोड़ो सीधे-सीधे बोलो चाहते क्या हो?'

यह रूप देखकर रघु हड़बड़ा गया। उसे खुद नहीं पता था कि वह चाहता क्या है? सीधे कहे भी क्या? कैसे कहे कि रंजना नौकरी छोड़ दे? कैसे कहे कि रंजना पत्नी बनकर उसका घर सँभाले? उसकी देखभाल करे। खाना बनाए। कपड़े धोए। उसके पैर दबाए। मालिश करे। वह हकलाने लगा, 'मैं, मैं, मैं क्या चाहता हूँ। तुम्हीं लोगों की खातिर कह रहा था। मुझे क्या है?'

रंजना आरपार के मूड में थी, 'हमारी चिंता के लिए ताने मारते हो? इतनी ही चिंता है तो एक काम करो, जितनी मुझे तनख्वाह मिलती है, उतने रुपये मुझे हर महीने दे दिया करो।'

रघु ने मौके को किसी योद्‍धा की तरह लपका, 'मैं कमाता हूँ तुम्हीं लोगों के लिए तो। इसमें मेरा तेरा की बात कहाँ से आ गई?'

मगर रंजना आज फँसने वाली नहीं थी, 'वही तो, अपने उन्हीं पैसों में से ही तनख्वाह माँग रही हूँ। तुम्हें क्या दिक्कत है?'

दही में मथानी की तरह रघु बात को घूमाने लगा, 'क्या करोगी अलग से पैसे लेकर?' दरअसल वह चाहता था कि जो कुछ अंदरूनी बात हो वह बाहर आ जाए।

रंजना वैसे ही शांत थी, 'कुछ भी करूँ? बस मुझे अलग से निकालकर दे दिया करो। मेरे अकाउंट में।'

रघु अभी दही को बिलो रहा था, 'मुझसे छिपाकर खर्च करोगी? मैं पूछ नहीं सकता?'

रंजना मुँह बिचकाते हुए बोली, 'ऐसी कोई बात नहीं है। क्या अपनी तनख्वाह मैं चोरी से खर्च करती हूँ? तुम पूछते नहीं तब भी मैं तुम्हें बताती हूँ, तुमसे पूछती हूँ।'

रघु एकटक देखता रहा। बात घुमाने से भी कुछ नहीं निकला। रंजना पास बैठी थी। वह बात को शांत करने लगी, 'आज मेरे अकाउंट में भी कुछ पूँजी जमा है। वह क्या सिर्फ मेरी है? क्या बिना बताए मैं कुछ करती हूँ? लेकिन मुझे अच्छा लगता है। मेरी खुशी की खातिर ही दे दो।'

रघु का दिमाग झनझना गया। कुछ बहुत बुरा बोलना चाहता था पर इतना ही कहा, 'तो साफ-साफ कहो न कि मुझे पैसे जमा करने हैं। कुछ हासिल करना है। कॅरियर बनाना है।'

रंजना का गुस्सा छँट गया था। उसकी ममता उफान मारने लगी। शाम को रघु को वापस लौटना था। उसने धीरे से कहा, 'तो इसमें गलत क्या है रघु? यह सब भी तो मैं तुम्हारी पत्नी बनकर ही कर रही हूँ।' रघु के सिर में हथौड़े चल रहे थे। बरसों से सँजोया मन का शीशा चिटक गया था। वह पूछना चाहता था कि पत्नी का मतलब भी उसे पता है? मगर पूछ नहीं सका। जो मतलब उसे पता था वह भी कहाँ ठीक था? फिर दोनों में कोई बात नहीं हुई। गुस्से में ही वह शाम की ट्रेन से निकल गया। सुबह ऑफिस पहुँचा तब भी मूड खराब था। मन में कई-कई दरारें थीं। यह वही सुबह थी जब सेक्रेटरी ने टारगेट पूरी होने की खुशी में पार्टी की बात कही तो रघु बौखला गया। मचलती हुई सारिका के चेहरे में उसे किसी और का अक्स दिखलाई पड़ा। उसका सिर घूम गया। सारिका को गालियाँ देता हुआ केबिन से 'गेट आउट' कहकर भगा दिया। दोनों हाथों में सिर थाम रिवॉल्विंग चेयर पर बैठ गया। उसे लग रहा था उसकी चेयर अपनी पूरी गति से घूम रही है। वह अपनी नजरें कहीं स्थिर नहीं कर पा रहा है।

रघु को खुद नहीं पता वह इतना गुस्सा क्यों है**?**